Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-1 | Issue-4 | Dec-2023 | Page 15-20

जैन कला का क्रमिक विकास

[1]दीप्ति गोस्वामी [2]डॉ. प्रदीप कुमार केशरवानी

[1]शोधार्थी, [2]प्राध्यापक व शोध निर्देशक

[1,2]इतिहास विभाग, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

[1]deeptigoswami52@gmail.com

भारत के विभिन्न धर्मों की भाँति जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, स्थापत्य और प्रतिमा कला का भारतीय संस्कृति के प्रति विशिष्ट अवदान है। जैन धर्म भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख अंग है। भारतीय संस्कृति का दृष्टिकोण समन्वयात्मक रहा है। इस समन्वय में हिन्दू, जैन, बौद्ध तथा अन्य विविध लोकधर्म सम्मिलित हैं। उनमें सैद्धान्तिक मतभेद होते हुए भी, सभी का लक्ष्य उस प्राचीन भारतीय आदर्श से ओत–प्रोत है, जिके अनुसार धर्म नैतिक जीवन के दर्शन तथा अनुशासन का पर्याय है।

जैन धर्म के साहित्यिक वर्णन के अनुरूप महावीर स्वामी के पूर्व तेईस तीर्थकर हो चुके थे, चौबीसवें तीर्थंकर स्वयं महावीर स्वामी थे, जितेन्द्रिय होने के कारण जिन कहलाए। जितेन्द्रिय महावीर ने अपने जीवन काल में लगभग सम्पूर्ण उत्तर भारत में विचरण कर अपने धर्म का प्रचार–प्रसार किया तथा राजपरिवारों और धनाढ्य श्रेष्ठियों से लेकर सामान्य जनता को अपने धर्म में दीक्षित किया।

मूर्ति शिल्प में पटना के समीप लोहानीपुर से मिली मौर्ययुगीन मूर्ति प्राचीनतम जिन मूर्ति है। चौसा और मथुरा से शुंग–कुषाण काल की जैन मूर्तियां मिली है। मथुरा से लगभग 150 ईसा पूर्व से 11 वीं सदी ई. के मध्य की प्रभूत जैन मूतियां मिली है। वे मूर्तियां आरम्भ से मध्ययुग तक के प्रतिमाविज्ञान की विकास श्रृंखला को प्रदर्शित करती है। [1]शुंग–कुषाण काल में मथुरा में सर्वप्रथम जिनों के वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिन्ह का उत्कीर्णन और जिनों का ध्यानमुद्रा में निर्माण प्रारम्भ हुआ। तीसरी से पहली सदी ई. पू. की अन्य जिन मूतियां कायोत्सर्गमुद्रा में निर्मित हैं। ज्ञातव्य है कि, जिनों के निर्माण में सर्वदा यही मुद्राएं प्रयुक्त हुई हैं। कुषाणकाल में ऋषभ, सम्भव, मुनिसुब्रत, नेमि, पार्श्व एवं महावीर की मूर्तियां, ऋषम एवं महावीर के जीवनदृष्य, अयागपट्ट, जिन–चौमुखी तभा सरस्वती एवं नैगमेषी की मूर्तियां उत्कीर्ण हुई।

[2]गुप्तकाल में केवल जिनों की स्वतन्त्र एवं जिन चौमुखी मूर्तियां ही उत्कीर्ण हुई। पुष्णदन्त, नेमि, पार्श्व एवं महावीर का निरुपण है। श्वेतांबर जिन मूर्तियां भी सर्वप्रथम इसी काल में बनी।

लगभग 10वीं से 12वीं शदी ई. के मध्य की जैन प्रतिमाविज्ञान को प्रभूत ग्रंथ एवं शिल्प सामग्री प्राप्त होती है। सर्वाधिक जैन मन्दिर और फलतः मूर्तियां भी 10वी से 12 वीं सर्दी ई. के मध्य बनी। श्वेताम्बर स्थलों की तुलना में दिगंबर स्थलों पर जिनों की अधिक मूर्तियां उत्कीर्ण हुई जिनमें स्वतन्त्र तथा द्वितीर्थी, त्रितीर्थी एवं चौमुखी मुर्तियां है। तुलनात्मक दृष्टि से जिनों के निरुपण में श्वेतांबर स्थलों पर एकरसता और दिगंबर स्थतों

पर विविधता मिलती है। श्वेतांबर स्थलों पर जिन मूर्तियों के पीठिका लेखों में जिनों के नामोल्लेख तथा दिगंबर स्थलों पर उनके लांछनों के अंकन की परम्परा मिलती है। जिनों के जीवन–दृश्य एवं समवसरणों के अंकन के उदाहरण केवल श्वेतांबर स्थलों पर ही सुलभ है।

श्वेतांबर स्थलों पर जिनों के बाद 16 महाविद्याओं और दिगंबर स्थलों पर यक्ष–यक्षियों के चित्रण सर्वाधिक लोकप्रिय थे। [3]16 महाविद्याओं में रोहिणी, वज्राकुशी, वज्रश्रृखला, अप्रतिचक्रा, अच्छुप्ता एवं वैरोट्या की ही सर्वाधिक मूर्तियां मिली है। शान्तिदेवी, बह्मशान्ति यक्ष, जीवन्तस्वामी महावीर, गणेश एवं 24 जिनों के माता–पिता के सामूहिक अंकन भी श्वेतांबर स्थलों पर ही लोकप्रिय थे। सरस्वती बलराम, कृष्ण, अष्टदिक्पाल, नवग्रह एवं क्षेत्रपाल आदि की मुर्तियां श्वेतांबर और दिगंबर दोनों स्थलों पर उत्कीर्ण हुई। श्वेतांबर स्थलों पर अनेक ऐसी देवियों की भी मूर्तियां मिलती है। जिनका जैन परम्परा में अनुउल्लेख है। इनमें हिन्दू शिवा और कौमारी तथा जैन सर्वानुभूति के लक्षणें के प्रभावली देवियों मूर्तियां सबसे अधिक है।

जैन युगलों और राम सीता तथा रोहिणी, मनोवेगा, गौरी, गांधारी, यक्षियों और गरूड़ यक्ष की मूर्तियां केवल दिगंबर स्थलों से ही मिली है।

[4]5वी शदी ई. के अन्त तक जैन देव कुल का मूल स्वरूप निर्धारित हो गया था, जिसमें 24 जिन, यक्ष और यक्षियां, विद्याएं, सरस्वती, लक्ष्मी, कृष्ण बलराम, राम नैगमेषी एवं अन्य शलाकापुरुष तथा कुछ और देवता सम्मिलित थे। इस काल तक जैन–देव कुल के सदस्यों के केवल कुछ सामान्य विषताएं ही निर्धारित हुई। पूर्ण विकसित जैन देवकुल में 24 जिनों एवं अन्य शलाकापुरूषों सहित 24 यक्ष–यक्षी युगल 16 विद्याएं, दिक्पाल नवग्रह, क्षेत्रपाल, गणेश, ब्रम्हशांति यक्ष, कपर्दिक यक्ष, बाहुबली, 64–योगिनी, शान्तिदेवी, जिनों के माता–पिता एवं पंचपरमेष्ठि आदि सम्मिलित है।

[5]24 जिनों की कल्पना जैन धर्म की धुरी है। ई. सन् के प्रारम्भ के पूर्व ही 24 जिनों की सूची निर्धारित हो गई थी। शिल्प में जिन मूर्ति का उत्कीर्णन लगभग 3री शदी ई. पू. में प्रारम्भ हुआ। मूर्तियों के आधार पर लोकप्रियता के क्रम में ये जिन ऋषभ, पार्श्व, महावीर और नेमि है। उपर्युक्त जिनों के बाद अजित, सम्भव, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, शान्ति एवं मुनिसुब्रत की सर्वाधिक मूर्तियां बनी। अन्य जिनों की मूर्तियां संख्या की दृष्टि से नगण्य है। तात्पर्य यह कि उत्तर भारत में 24 में से केवल 10 ही जिनों का अंकन लोकप्रिय था। दक्षिण भारत में पार्श्व और महावीर की सर्वाधिक मूर्तियां मिलती है।

जिन मूतियों में सर्वप्रथम पार्श्व का लक्षण स्पष्ट हुआ। लगभग 02–01 ई.पू. में पार्श्व के साथ शीर्षभाग में सात सर्पफणों के छत्र का प्रदर्शन किया गया। पार्श्व के बाद मथुरा एवं चौसा की पहली शदी ई. की मूर्तियों में ऋषभ के साथ जटाओं का प्रदर्शन हुआ। कुषाण काल में ही मथुरा में नेमि के साथ बलराम और कृष्ण का अंकन हुआ। इस प्रकारण कुषाण काल तक ऋषभ, नेमि और पार्श्व के लक्षण निश्चित हुए। मथुरा में कुषाण काल में

Innovation and Integrative Research Center Journal
ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-1 | Issue-4 | Dec-2023 | Page 15-20

सम्भव, मुनिसुब्रत एवं महावीर की भी मूर्तियां उत्कीर्ण हुई, जिनकी पहचार पीठिका लेखों में उत्कीर्ण नामो के आधार पर की गई है।

गुप्तकाल में जिनों के साथ सर्वप्रथम लांछनों, यक्ष–यक्षी युगलों एवं अष्ट–प्रातिहार्यों का अंकन प्रारंभ हुआ। राजगिर एवं भारत कला भवन, वाराणसी की नेमि और महावीर की दो मूर्तियों में पहली बार लांछन का, और अकोटा की ऋषभ की मूर्ति में यक्ष–यक्षी (सर्वानुभूति एवं अम्बिका) का चित्रण हुआ।

[6]लगभग 08–09 सदी ई. में 24 जिनों के स्वतन्त्र लांछनों की सूची बनी, जो कहावली, प्रवचनसारोद्वार एवं तिलोयपण्णति में सुरक्षित है। लगभग 08–09 शदी ई. तक मूर्तिविज्ञान की दृष्टि से जिन मूर्तियां पूर्णतः विकसित हो गई। पूर्णविकसति जिन मूर्तियों में लांछनों, यक्ष–यक्षी युगलों एवं अष्ट–प्रातिहार्यों के साथ ही परिकर में छोटी जिन मूर्तियों, नवग्रहों, गजाकृतियों, धर्मचक्र, विद्याओं एवं अन्य आकृतियों का अंकन हुआ। सिंहासन के मध्य में पद्य से युक्ति शान्तिदेवी तथा गजों एवं मृगों का निरूपण केवल श्वेतांबर सथलों पर लोकप्रिय था। 11वी से 13वीं शदी ई. के मध्य श्वेतांबर स्थलों पर ऋषभ, शान्ति, मुनिसुब्रत, नेमि, पार्श्व एवं महावीर के जीवनदृश्यों का विशद अंकन भी हुआ, जिसके उदाहरण ओसिया की देवकुलिकाओं, कुम्भारिया के शान्तिनाथ एवं महावीर मन्दिरों, जालोर के पार्श्वनाथ मन्दिर और आबू के विमलवसही और लूणवसही से मिले है। इनमें जिनों के पंचकल्याणकों एवं कुछ अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं को दर्शाया गया है, जिनमें भरत और बाहुबली के युद्ध, शान्ति के पूर्वजन्म में कपोत की प्राणरक्षा की कथा, नेमि के विवाह, मुनिमुब्रत के जीवन की अश्वावबोध और शकुनिका–विहार की कथाएं तथा पार्श्व एवं महावीर के उपसर्ग प्रमुख है।

लगभग 10 वी सदी ई. में जिन मूर्तियों के परिकर में 23 या 24 छोटी जिन मूर्तियों का अंकन प्रारम्भ हुआ। बंगाल की छोटी जिन मूर्तियां अधिकांशतः लांछनों से युक्त है। जैन ग्रन्थों में द्वितीर्थी एवं त्रितीर्थी जिन मूर्तियों के उल्लेख नहीं मिले। पर दिगंबर स्थलों पर, मुख्यतः देवगढ़ एवं खजुराहों में, नवी से बारहवी शदी ई. के मध्यम इनका उत्कीर्णन हुआ। इन मूर्तियों में दो या तीन भिन्न जिनों को एक साथ निरूपित किया गया है।

[7]जिन चौमुखी मूर्तियों का उत्कीर्णन पहली शदी ई. में मथुरा में प्रारम्भ हुआ बौर आगे की शताब्दिों में भी लोकप्रिय रहा। चौमुखी मूर्तियों में चार दिशाओं में चार ध्यानस्थ वा कायोत्सर्ग जिन मूर्तियां उत्कीर्ण होती हैं। इन मूर्तियों को दो मुख्य वर्गों में बांटा जा सकता है। पहले वर्ग में वे मूर्तियां है जिनमें चारों ओर एक ही जिन की चार मूर्तियां उत्कीर्ण है। दूसरे वर्ग की मूर्तियों में चारों ओर चार अलग–अलग जिनों की चार मूर्तियां है।

[8]लगभग छठवी शदी ई. में शिल्प में जिनों के शासन और उपासक देवों के रूप में यक्ष और यक्षी का निरूपण प्रारंभ हुआ। यक्ष एवं यक्षी को जिन मूर्तयों के सिंहासन या पीठिका के क्रमशः दायें और बायें छोरों पर अंकित किया गया। लगभग छठी से नवीं शदी ई. तक के ग्रंथों में केवल यक्षराज (सर्वानुभूति), धरणेन्द्र, चक्रेश्वरी, अम्बिका एवं पद्मावती की ही कुछ लाक्षणिक विशेषताओं के उल्लेख है। 24 जिनों के स्वतन्त्र यक्षी–यक्षी युगलों की

ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-1 | Issue-4 | Dec-2023 | Page 15-20

सूची लगभग आठवी—नवी शदी ई० में निर्धारित हुई। सबसे प्रारम्भ की सूचियां कहावली, तिलोयपण्णांत्त और प्रवचनसारोद्वार में है। दिगंबर ग्रंयों में यक्ष और यक्षियों के नाम और उनकी लाक्षणिक विशेषताएं श्वेतांबर ग्रंयों की अपेक्षा स्थिर और एकरूप है।

दूसरी कोटि में ऐसे यक्ष—यक्षी युगल हैं जो मूलरूप में हिन्दू देवकुल में भी वापस में सम्बन्धित है, जैसे श्रेयांशनाथ के ईश्वर एवं गौरी यक्ष—यक्षी युगल। तीसरी कोटि में ऐसे यक्ष—यक्षी युगल हैं जिनमें यक्ष एक और यक्षी दुसरे स्वतन्त्र सम्प्रदाय के देवता से प्रभावित है। ऋषभनाथ के गोमुख यक्ष एवं चक्रेश्वरी यक्षी इसी कोटि के है, जो शिव और वैष्णवी से प्रभावित है। शिव और वैष्णवी क्रमशः शैव एवं वैष्णव धर्म के प्रतिनिधि देव है।

[9]छठी सदी ई. में जिन मूर्तियों में और लगभग नवी शदी ई. में स्वतन्त्र मूर्तियों के रूप में यक्ष—यक्षियों का निरूपण प्रारम हुआ। दसवी शदी ई. से ऋषभ, शान्ति, नेमि, पार्श्व एवं महावीर के साथ सर्वानुभूति एवं अम्बिका के स्थान पर पारम्परिक या स्वतन्त्र लक्षणों वाले यक्ष—यक्षी युगलों का निरूपण प्रारंभ हुआ, जिसक मुख्य उदाहरण देवगढ़, ग्यारसपुर, खजुराहों एवं लखनऊ में है। इन स्थलों की दसवी शदी ई. की मूर्तियों में ऋषभ और नेमि के साथ क्रमशः गोमुख—चक्रेश्वरी और सर्वानुभूति—अम्बिका तथा शांति, पार्श्व एवं महावीर के साथ स्वतन्त्र लक्षणों वाले यक्ष—यक्षी उत्कीर्ण है।

यक्ष और यक्षियों की सर्वाधिक जिन—संयुक्त और स्वतन्त्र मूर्तियां दिगंबर स्थलों पर उत्कीर्ण हुई। दसवी से बारहवी शदी ई. के मध्य ऋषभ, नेमि एवं पार्श्व के साथ पारम्परिक और सुपार्श्व, चन्द्रपभ, शान्ति एवं महावीर के साथ स्वतन्त्र लक्षणों वाले यक्ष—यक्षी युगल निरूपित हुए।

उत्तर पश्चिम भारत में अम्बिका की सर्वाधिक मूर्तियां बनी चक्रेश्वरी, पद्यावती एवं सिद्धायिका की भी कुछ मूर्तियां मिली है। यक्षों में केवल गोमुख, वरुण सर्वानुभूति एवं पार्श्व की ही स्वतन्त्र मूर्तियां है।

[10]उड़ीसा की नवमुनि एवं बारहभुजी गुफाओं में क्रमशः सात और चौबीस यक्षियों की मूर्तिया उत्कीर्ण है। [11]दक्षिण भारत में गोमुख, कुबेर, धरणेन्द्र एवं मातंग यक्षें तथा चक्रेश्वरी, ज्वालामालिना, अम्बिका, पद्मावती एवं सिद्धायिका यक्षियों की मूर्तियां बनी। यक्षियों में ज्वालामालिनी, अम्बिका एवं पद्मावती सर्वाधिक लोकत्रिय थी।

प्रारम्भिक जैन ग्रंथों में 24 जिनों सहित जिन 63 शलाकापुरूषों के उल्लेख है, उनकी सूची सदैव स्थिर रही है। इस सूची में 24 जिनों के अतिरिक्त 12 चक्रवर्ती, 9 वासुदेव और 9 प्रतिवासुदेव सम्मिलित है। [12]जैन शिल्प में 24 जिनों के अतिरिक्त अन्य शलाकापुरूषों में से केवल बलराम, कृष्ण, राम और भरत की ही मूर्तियां मिलती है। बलराम और कृष्ण के अंकन कुषाण युग में तथा राम और भरत के अंकन दसवी—बारहवीं शदी ई. में हुए। श्रीलक्ष्मी और सरस्वती के उल्लेख प्रारम्भिक जैन ग्रन्थों में है। सरस्वती का अंकन कुषाण युग में और श्री लक्ष्मी का अंकन दसवी शदी ई. में हुआ। जैन सपरम्परा में इन्द्र का जिनों के प्रधान सेवक के रूप में उल्लेख है और उसकी मूर्तियां ग्यारहवीं—बारहवीं शदी ई. में

बनी। प्रारंभिक जैन ग्रंथों के उल्लेख और उनकी मूर्तियां दसवीं से बारहवीं शदी ई. के मध्य की है।

संदर्भ

1. विष्णु पुराण, 4,24,64, गीता प्रेस गोरखपुर अष्टम संस्करण, सं–2033
2. सरकार, डी.सी., स्टडीज इन ज्योग्राफी ऑफ एन्शिएन्ट एण्ड मिडिवल इण्डिया, द्वितीय संस्करण– 1971 पृष्ठ–42–45
3. दक्षिण कोसल का ऐतिहासिक भूगोल, पृष्ठ–5–6
4. आक्रियोलाजिकल सर्वे ऑफ वेस्टर्न इण्डिया, भाग 5. पृष्ठ–12
5. एपिग्राफिआ इण्डिका, खण्ड 31 पृष्ठ– 219
6. दक्षिण कोसल का इतिहास, पृष्ठ 36
7. श्रीवास्तव, के.सी., प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, पूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद 2005–06, पृष्ठ–385–86
8. एपिग्राफिआ इण्डिका, भाग 34 पृष्ठ 36
9. दक्षिण कोसल का ऐतिहासिक भूगोल, पृष्ठ
10. मुनि कांतिसागर महाकोशल में जैन पुरातत्व, शुक्ल अभिनंद ग्रंथ 1955, पू 204–13
11. एपिग्राफिआ इण्डिका, भाग 4. पृष्ठ 257
12. स्मिथ बी.ए. जैन स्तूपा एंड अदर एण्टिक्टीज फाम मथुरा, पृ. 9–11

————————————

ISSN: 2584-1491 | www.iircj.org
Volume-1 | Issue-4 | Dec-2023 | Page 15-20

तीर्थंकर प्रतिमा, रायपुर संग्रहालय

सर्वतोभद्र प्रतिमा, रायपुर संग्रहालय

चौबीस तीर्थंकरपट्ट, रायपुर संग्रहालय